भारतीय ज्ञान परंपरा

संस्कृति, दर्शन, शैक्षिक विचारधाराएँ और नवाचार

सम्पादक :
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

भारतीय ज्ञान परंपरा :
संस्कृति, दर्शन, शिक्षा विचारधाराएँ और नवाचार

सम्पादक :

डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

Ph.D., D.Lit. (Sub.)

निदेशक, कॉम्पिटिशन प्लस ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन,
अजमेर

छवि पब्लिकेशन्स

अजमेर-305001

प्रकाशक :
छवि पब्लिकेशन्स
अजमेर-305001
मो. 9660111549

संस्करण :
प्रथम 2022-2023

ISBN : 978 - 81 - 89435 - 64 - 6

मूल्य - 300/-

रचना - भारतीय ज्ञान परम्परा में शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार

सम्पादक - डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

मुद्रक - श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स, अजमेर

19. हैनरिक पेस्टोलोजी और शिक्षा दर्शन

भावना जैन
सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग)
हुकुमचन्द नोबेल इंस्टीट्यूट ऑफ साईंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

हेनरिक पेस्टालॉजी का जन्म स्विट्जरलैण्ड के ज्यूरिख नगर में हुआ था। उनका जीवन बाल्यकाल से ही करुणा, प्रेम, सहानुभूति, सहयोग, दया और सेवा की भावना से ओत-प्रोत था। उन्होंने मानवता की सेवा को ही जीवन का परम उद्देश्य माना। पेस्टालॉजी ने किसी नवीन दशज़्न का प्रतिपादन नहीं किया, न ही वे किसी पूवज़्वतीज़् दाशज़्निक सिद्धांत की प्रत्यक्ष व्याख्या करते हैं, परंतु एक गहन चिन्तनशील व्यक्ति होने के कारण उनका जीवन-दृष्टिकोण अत्यंत मौलिक और व्यावहारिक था।

उनके विचार मुख्यत: उनकी प्रसिद्ध रचना 'लियोनार्ड एंड गेरट्रूड' में प्रतिपादित हैं। इसी ग्रंथ के माध्यम से वे शिक्षा-जगत् में प्रसिद्ध हुए। पेस्टालॉजी का मत था कि शिक्षा मनुष्य के स्वाभाविक विकास की प्रक्रिया है, और यह विकास केवल ज्ञान तक सीमित न रहकर मानसिक, नैतिक तथा शारीरिक—तीनों स्तरों पर सर्वांगीण होना चाहिए।

उनके अनुसार शिक्षा किसी बाहरी प्रभाव या दबाव का परिणाम नहीं है, बल्कि यह मनुष्य के भीतर से उत्पन्न होने वाली आंतरिक प्रक्रिया है। उन्होंने कहा कि जैसे एक बीज में सम्पूर्ण वृक्ष बनने की शक्ति निहित रहती है, उसी प्रकार हर बालक के भीतर भी सम्पूर्ण मानव बनने की सम्भावना छिपी होती है। अत: शिक्षक का कार्य उस आंतरिक शक्ति को विकसित करना है, न कि बाहरी रूप से ज्ञान ठूँसना।

पेस्टालॉजी का जीवन त्याग, सेवा और प्रेम का जीवंत उदाहरण था। उन्होंने स्वयं को गरीब और भिक्षुक बच्चों की सेवा में समर्पित कर दिया। वे कहा करते थे—''मैं बहुत दिनों तक पचास से भी अधिक भिक्षुक बालकों के बीच रहा हूँ। गरीबी में मैंने उन्हें अपनी रोटी का हिस्सेदार बनाया है। मैं स्वयं भी एक भिक्षुक की भाँति रहा क्योंकि मैं चाहता था कि भिक्षुकों को मनुष्य की तरह जीवनयापन करने की विधि सिखा सकूँ।''

हेनरिक पेस्टालॉजी शिक्षा को केवल ज्ञानार्जन का माध्यम नहीं, बल्कि मानव जीवन के सवाज़्गीण एवं सामंजस्यपूर्ण विकास की प्रक्रिया मानते थे। वे इस बात के पक्षधर थे कि शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य के व्यक्तित्व के सभी पक्षों — शारीरिक, मानसिक

और नैतिक का संतुलित विकास होना चाहिए। उनका मत था कि यदि इन तीनों में से किसी एक पक्ष का विकास अन्य की उपेक्षा कर अधिक हो जाए, तो व्यक्ति का विकास एकांगी रह जाएगा, जो समाज और स्वयं उसके लिए हानिकारक सिद्ध होगा।

पेस्टालॉजी के अनुसार शिक्षा का परम लक्ष्य मानव को सुखी बनाना है। वे मानते थे कि सच्चा सुख केवल भौतिक संपन्नता से नहीं, बल्कि आंतरिक संतुलन और सामंजस्यपूर्ण विकास से प्राप्त होता है। जब मनुष्य का शरीर, बुद्धि और आत्मा तीनों समरस भाव से विकसित होते हैं, तभी जीवन में वास्तविक आनंद और शांति सम्भव है।

वे सार्वभौमिक शिक्षा के समर्थक थे। पेस्टालॉजी व्यक्ति को केवल एक इकाई के रूप में नहीं, बल्कि सम्पूर्ण मानव जाति के अंग के रूप में देखते थे। उन्होंने मनुष्य के विकास को सम्पूर्ण विश्व और समाज की पृष्ठभूमि में समझने का प्रयास किया। उनके विचार में शिक्षा का संबंध केवल पुस्तकीय ज्ञान से नहीं, बल्कि व्यावहारिक जीवन और मानव सेवा से भी है। वे कहते थे कि यथार्थ ज्ञान अनुभव से प्राप्त होता है, जबकि आत्मा का ज्ञान समाज में सेवा और नैतिक आचरण के द्वारा मिलता है। इसीलिए उन्होंने शिक्षा में नैतिकता, धार्मिकता और सामाजिक उत्तरदायित्व को अत्यधिक महत्व दिया।

पेस्टालॉजी का शैक्षिक दर्शन उनके दार्शनिक चिंतन, मनोवैज्ञानिक समझ और मानवतावादी दृष्टिकोण पर आधारित था। उनके विचारों पर फ्रांसीसी दार्शनिक जाँ-जाक रूसो का गहरा प्रभाव था। यद्यपि उन्होंने रूसो की प्राकृतिक शिक्षा के सिद्धांत को स्वीकार किया, परंतु उसमें मानवता, प्रेम और सामाजिक सेवा का व्यावहारिक तत्व जोड़कर उसे और अधिक जीवंत बना दिया।

उनके शैक्षिक विचारों का सार उनके लेखन में प्रतिबिम्बित होता है। शिक्षा के क्षेत्र में उनकी दो रचनाएँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं —

1. Leonard and Gertrude : Teaches Her Children, जिसमें उन्होंने पारिवारिक और सामाजिक जीवन में शिक्षा की भूमिका का चित्रण किया है।

2. My Investigations into the Course of Nature in the Development of the Human Race, जिसमें उन्होंने मानव विकास की प्राकृतिक प्रक्रिया और शिक्षा के संबंध का विश्लेषण प्रस्तुत किया है।

अंतत: पेस्टालॉजी के अनुसार शिक्षा का चरम उद्देश्य सम्पूर्ण मानव जाति का कल्याण है। वे ऐसी शिक्षा की कल्पना करते हैं जो व्यक्ति को केवल विद्वान न बनाकर सत्य, करुणा, सेवा और संतुलन से युक्त श्रेष्ठ मानव बनाए — क्योंकि उनके अनुसार शिक्षा का सार मानवता में निहित है।

पेस्टालॉजी का पाठ्यक्रम :- हेनरिक पेस्टालॉजी ने पाठ्यक्रम के निर्धारण में भी सर्वांगीण एवं सामंजस्यपूर्ण विकास की दृष्टि को सर्वोपरि माना। उनके अनुसार

शिक्षा का उद्देश्य तभी पूर्ण हो सकता है जब पाठ्यक्रम इस प्रकार संगठित किया जाए कि बालक के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक तथा नैतिक—चारों पक्षों का संतुलित विकास हो सके।

पेस्टालॉजी के शैक्षिक विचारों पर रूसो के प्रकृतिवाद का स्पष्ट प्रभाव था। उन्होंने रूसो की इस धारणा को स्वीकार किया कि शिक्षा का आरम्भ प्रकृति और प्रत्यक्ष अनुभवों से होना चाहिए। इसीलिए वे कहते हैं कि शिक्षा की प्रारम्भिक अवस्था में बालक को पदार्थों का प्रत्यक्षीकरण कराना चाहिए ताकि वह वस्तुओं को देखकर, छूकर, अनुभव करके ज्ञान प्राप्त करे। इस प्रकार वह संख्याओं, रूपों और शब्दों के ज्ञान तक स्वाभाविक रूप से पहुँच सके।

पेस्टालॉजी ने अपने पाठ्यक्रम में उन सभी विषयों को स्थान दिया जो बालक के व्यक्तित्व के समग्र विकास में सहायक हों। उन्होंने पाठ्यक्रम में निम्न विषयों को सम्मिलित किया—

भाषा : विचारों की अभिव्यक्ति और संप्रेषण का माध्यम।

गणित : तार्किक चिंतन एवं मानसिक अनुशासन के विकास के लिए।

कृषि एवं श्रम : श्रम के प्रति सम्मान और आत्मनिर्भरता का बोध कराने के लिए।

इतिहास एवं भूगोल : यथार्थ जीवन एवं सामाजिक ज्ञान की समझ के लिए।

आचारशास्त्र : नैतिकता, ईमानदारी और सामाजिक उत्तरदायित्व के निर्माण के लिए।

खेलकूद : शरीर और मन के स्वस्थ संतुलन के लिए।

यद्यपि पेस्टालॉजी ने रूसो की कई धारणाओं को स्वीकार किया, परंतु उन्होंने इतिहास के अध्ययन को कुछ हद तक अप्राकृतिक या अप्रासंगिक मानते हुए आरंभिक शिक्षा में उसके महत्त्व को सीमित रखा। उनका पाठ्यक्रम पूरी तरह यथार्थवादी था अर्थात् बालक के वास्तविक जीवन, उसकी आवश्यकताओं और अनुभवों से संबंधित।

पेस्टालॉजी का पाठ्यक्रम मुख्यतः 3 से 13 वर्ष की आयु तक के बच्चों की स्कूली शिक्षा को ध्यान में रखकर निर्मित किया गया था। उनके अनुसार शिक्षा का प्रथम कार्य बालक की आंतरिक शक्तियों का विकास करना है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए वे बच्चों को खेलने-कूदने, प्रकृति का निरीक्षण करने, अपने चारों ओर की वस्तुओं को देखने-समझने और उनसे सीखने के अवसर देने पर बल देते थे।

वे मानते थे कि जब शिक्षा बालक की रुचि, अनुभव और प्राकृतिक प्रवृत्तियों के अनुरूप होगी, तभी वह बालक के हृदय और मस्तिष्क दोनों को जाग्रत करेगी।

पेस्टालॉजी की शिक्षण विधियाँ :- हेनरिक पेस्टालॉजी केवल एक सैद्धान्तिक

विचारक नहीं थे, बल्कि वे अत्यंत व्यावहारिक शिक्षक और प्रयोगशील शिक्षाविद् थे। उन्होंने शिक्षा को जीवन के निकट लाने का प्रयास किया। पेस्टालॉजी को अपने समय की शिक्षण पद्धति पर गहरा खेद था। उस युग में अधिकांश विद्यालय चर्च के नियंत्रण में थे, जहाँ बच्चों को यांत्रिक रूप से अनेक निरर्थक बातें रटाई जाती थीं। शिक्षक भी रटना ही शिक्षा का मूल उद्देश्य समझते थे। पेस्टालॉजी ने इस प्रकार की रटन्त शिक्षा प्रणाली का तीव्र विरोध किया और शिक्षा को अनुभव, प्रयोग तथा समझ पर आधारित करने की वकालत की।

शिक्षण–विधियों के क्षेत्र में पेस्टालॉजी पर रूसो का गहरा प्रभाव था। उन्होंने शिक्षा की पूरी प्रक्रिया को मनोविज्ञान के सिद्धांतों पर आधारित करने का प्रयास किया। उनका मानना था कि जब तक शिक्षा बालक के मानसिक विकास की गति और उसकी समझ के अनुरूप नहीं होगी, तब तक वह प्रभावी नहीं हो सकती।

उन्होंने बाल–मस्तिष्क की तीन अवस्थाओं का उल्लेख किया—

(1) अस्पष्ट इन्द्रियगत अनुभव : इस अवस्था में बालक इन्द्रियों द्वारा वस्तुओं का केवल सामान्य अनुभव प्राप्त करता है। वह वस्तु को देखता तो है, पर उसे स्पष्ट रूप से नहीं समझ पाता।

(2) स्पष्ट इन्द्रियगत अनुभव : इस अवस्था में बालक वस्तुओं को अधिक स्पष्ट रूप से पहचानने और उनके गुणों को समझने लगता है।

(3) वर्गीकरण या संकल्पनात्मक अवस्था : इस स्तर पर बालक अपने अनुभवों को वर्गीकृत कर वास्तविक ज्ञान प्राप्त करता है।

इन तीनों अवस्थाओं से यह स्पष्ट होता है कि पेस्टालॉजी शिक्षा को इन्द्रियानुभव से बुद्धिगत ज्ञान की ओर अग्रसर एक प्रक्रिया मानते थे।

मुख्य शिक्षण विधियाँ :– रूसो की भाँति पेस्टालॉजी भी इस विचार के पक्षधर थे कि बालक को ज्ञान स्वयं खोजने के अवसर मिलने चाहिए। वे बिना समझे रटने के सख्त विरोधी थे। इस दृष्टि से उन्होंने कुछ प्रमुख शिक्षण विधियों पर बल दिया, जो आज भी आधुनिक शिक्षा–शास्त्र में अत्यंत महत्त्वपूर्ण मानी जाती हैं—

(1) निरीक्षण विधि :– पेस्टालॉजी के अनुसार शिक्षा का आरम्भ निरीक्षण से होना चाहिए। बालक अपनी आँखों, कानों और अन्य इन्द्रियों के माध्यम से संसार को समझे। शिक्षक का कार्य है बालक को देखने, सोचने और प्रश्न पूछने के लिए प्रेरित करना।

(2) क्रिया विधि या करके सीखना :– पेस्टालॉजी का विश्वास था कि ज्ञान केवल सुनने या पढ़ने से नहीं, बल्कि स्वयं करने से आता है। जब बालक अपने हाथों से कार्य करता है, तो उसे वस्तुओं की वास्तविक समझ प्राप्त होती है। यह विधि आज की

कार्य–आधारित शिक्षा की आधारशिला मानी जाती है।

(3) आगमन विधि :- उन्होंने शिक्षण में आगमन विधि को अपनाने पर बल दिया। इस विधि में बालक पहले विशेष उदाहरणों को देखकर स्वयं सामान्य सिद्धान्तों की खोज करता है। इससे उसकी तार्किक और विश्लेषणात्मक क्षमता विकसित होती है।

(4) आन्शवांग विधि :- उपरोक्त विधियों के अतिरिक्त पेस्टालॉजी ने एक विशेष शिक्षण पद्धति का विकास किया जिसे उन्होंने आन्शवांग विधि कहा। यह उनकी शिक्षण प्रणाली का प्रमुख आधार थी।'आन्शवांग' शब्द का अर्थ है — प्रत्यक्ष अनुभूति, स्थूल अनुभव या व्यक्तिगत सम्पर्क। इस विधि के अनुसार ज्ञान का आरम्भ बालक के प्रत्यक्ष अनुभवों और अवलोकन से होना चाहिए। जब बालक किसी वस्तु को स्वयं देखता, छूता और अनुभव करता है, तभी वह उसे वास्तव में समझ सकता है।

पेस्टालॉजी का मत था कि देखे बिना सीखी गई बातें केवल शब्द हैं, ज्ञान नहीं। इसीलिए उन्होंने शिक्षा को प्रत्यक्ष, क्रियात्मक और अनुभवात्मक बनाने पर सबसे अधिक बल दिया।

हेनरिक पेस्टालॉजी के शिक्षण सिद्धांत उनके गहन दार्शनिक चिंतन, मानवीय दृष्टिकोण तथा प्रकृति–आधारित शैक्षिक विचारधारा पर आधारित हैं। उन्होंने शिक्षा को केवल ज्ञानार्जन की प्रक्रिया न मानकर मानव की आंतरिक शक्तियों के संतुलित एवं स्वाभाविक विकास का साधन माना। उनके शिक्षण सिद्धांत और विधियाँ निम्नानुसार हैं—

(1) विकास सामंजस्यपूर्ण होना चाहिए - पेस्टालॉजी के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य का सर्वांगीण विकास है। उनका मानना था कि बौद्धिक, नैतिक एवं रचनात्मक — ये तीनों पहलू एक साथ कार्य करते हैं; अतः तीनों का सामंजस्यपूर्ण विकास आवश्यक है। उन्होंने कहा— ''मानव–प्रकृति के एक पक्ष का विशिष्ट विकास अप्राकृतिक एवं मिथ्या है। सच्ची शिक्षा मनुष्य की शक्तियों में पूणज़्ता लाने का अनिवायज़् प्रयत्न करती है।''

पेस्टालॉजी ने मनुष्य को प्रकृति की एक समग्र इकाई माना और कहा कि किसी एक शक्ति का अतिविकास संतुलन को नष्ट करता है। सच्ची शिक्षा वह है जो मनुष्य के संपूर्ण व्यक्तित्व को विकसित करे।

(2) सामान्य शिक्षा पहले और व्यावसायिक शिक्षा बाद में - प्रारम्भ में पेस्टालॉजी का मत था कि शिक्षा का आरंभ कृषि या श्रम संबंधी कार्यों से होना चाहिए, परंतु बाद में उन्होंने अपनी धारणा में परिवर्तन करते हुए कहा कि पहले मानव की मौलिक शक्तियों जैसे विचार, अनुभव, नैतिकता और आत्मबल का विकास होना चाहिए, और इसके

पश्चात व्यावसायिक शिक्षा दी जानी चाहिए। उन्होंने रूसो के समान यह माना कि बालक को पहले मानव बनना सिखाना चाहिए, फिर कर्मयोगी बनाना।

(3) ज्ञान से अधिक शक्तियों का विकास आवश्यक है – पेस्टालॉजी के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य बालक के मस्तिष्क में केवल ज्ञान का संचय नहीं है, बल्कि उसकी मानसिक और सृजनात्मक शक्तियों का विकास करना है। उन्होंने तत्कालीन शिक्षा-पद्धति की आलोचना करते हुए कहा कि वहाँ ज्ञान और संस्कारों पर तो बल दिया जाता था, परंतु चिंतन, अनुभव और रचनात्मकता की उपेक्षा की जाती थी।

उनका विश्वास था कि शिक्षा को इस प्रकार बनाया जाए कि बालक स्वयं सोचने, समझने और सृजन करने में सक्षम बने।

(4) विकास आंतरिक होता है – पेस्टालॉजी का यह प्रमुख सिद्धांत था कि बालक की शक्तियों का विकास अंदर से होता है। किसी भी बाह्य साधन या दवाब से यह विकास संभव नहीं। उन्होंने कहा कि शिक्षक बालक के भीतर स्थित संभावनाओं को बाहर लाने में सहायक हो सकता है, परंतु विकास का गित सदैव बालक के भीतर ही होता है। इस सिद्धांत से उन्होंने शिक्षा को प्राकृतिक और आत्मगत प्रक्रिया के रूप में स्थापित किया।

(5) शिक्षण के स्तरों का महत्त्व – पेस्टालॉजी ने माना कि प्रत्येक बालक की क्षमताएँ, रुचियाँ और मानसिक गति भिन्न होती हैं। अत: ''सभी छात्रों को एक ही लाठी से नहीं हाँका जा सकता।''

शिक्षा की पद्धति और स्तर बालक की आयु, समझ और योग्यता के अनुसार होने चाहिए। शिक्षक का कार्य प्रत्येक विद्यार्थी की विशिष्टता को पहचानकर उसे उसके अनुकूल मार्गदर्शन देना है।

(6) शिक्षण में प्रकृति का अनुसरण करना चाहिए – पेस्टालॉजी ने शिक्षा को प्रकृति के अनुरूप बनाने पर विशेष बल दिया। उनके अनुसार शिक्षक को 'माली के समान' होना चाहिए, जिसका कार्य केवल विकास का अनुकूल वातावरण तैयार करना है। वास्तविक विकास तो प्रकृति स्वयं करती है।

अत: शिक्षक को बालक की स्वाभाविक प्रवृत्तियों का सम्मान करना चाहिए और उन्हें अनुशासन या भय से नहीं, बल्कि अनुभव और प्रेरणा से विकसित करना चाहिए।

पेस्टालॉजी के ये सिद्धांत आज भी आधुनिक शिक्षा-दर्शन की नींव हैं। उन्होंने शिक्षा को मानवीयता, अनुभव और प्रकृति से जोड़कर उसे यथार्थ जीवन के निकट लाने का प्रयास किया। इसीलिए उन्हें 'आधुनिक प्राथमिक शिक्षा का जनक' कहा जाता है।

उपर्युक्त सिद्धान्त पेस्टालॉजी के प्रमुख शिक्षण-सिद्धान्त हैं, जिनमें उनकी शैक्षणिक दृष्टि की गहराई, मानवतावाद एवं बालक-केंद्रित दृष्टिकोण स्पष्ट झलकता है। इन सिद्धान्तों

का विस्तृत विवेचन प्रसिद्ध विद्वानों ए.बी. एण्ड एरोबुड की पुस्तक "The Development of Modern Education" में मिलता है। पेस्टालॉजी के शिक्षण-सिद्धान्तों का विश्लेषण उनके योग्य शिष्य मॉर्फ ने भी अत्यंत सुन्दर ढंग से किया है। मॉर्फ ने न केवल पेस्टालॉजी की जीवनी लिखी, बल्कि उनके सिद्धान्तों का सार भी प्रस्तुत किया।

मॉफ के अनुसार पेस्टालॉजी के शिक्षण सिद्धान्तों का सारांश निम्नलिखित है—

(1) निरीक्षण शिक्षा का आधार है — पेस्टालॉजी के अनुसार समस्त शिक्षा अनुभव एवं निरीक्षण पर आधारित होनी चाहिए। बालक को प्रत्यक्ष अनुभवों के माध्यम से ज्ञान प्राप्त करने देना ही सच्ची शिक्षा है।

(2) निरीक्षण और भाषा का परस्पर संबंध आवश्यक है — जब बालक वस्तुओं का निरीक्षण करे तो उसके साथ उचित भाषा-प्रयोग भी सिखाया जाए, जिससे विचारों की अभिव्यक्ति में दक्षता विकसित हो।

(3) सीखने की अवस्था में आलोचना या निणज़्य नहीं होना चाहिए — बालक के सीखने की प्रक्रिया में स्वतंत्रता और सहजता होनी चाहिए। आलोचना उसके आत्मविश्वास को बाधित करती है।

(4) शिक्षण क्रम मनोवैज्ञानिक होना चाहिए — शिक्षण सरल से जटिल, ज्ञात से अज्ञात और निकट से दूर की ओर होना चाहिए। ज्ञानार्जन का क्रम तार्किक नहीं, बल्कि बालक के मनोविज्ञान के अनुसार हो।

(5) *बालक को पर्याप्त समय मिलना चाहिए — किसी तथ्य को समझने के लिए समय देना अत्यावश्यक है। शीघ्रता बालक की समझ को सीमित कर देती है।

(6) अध्ययन का उद्देश्य विकास होना चाहिए, व्याख्यान नहीं — शिक्षा का लक्ष्य केवल तथ्यों की व्याख्या नहीं, बल्कि बालक के व्यक्तित्व और उसकी आन्तरिक शक्तियों का विकास होना चाहिए।

(7) शिक्षक को बालक के व्यक्तित्व का सम्मान करना चाहिए — प्रत्येक बालक की प्रतिभा, प्रवृत्ति और क्षमता भिन्न होती है। शिक्षक का कर्तव्य है कि वह उसकी विशिष्टता का आदर करे।

(8) प्रारम्भिक शिक्षा का उद्देश्य बुद्धि-विकास होना चाहिए — शिक्षा का प्रारम्भिक चरण केवल सूचना प्रदान करने के लिए नहीं, बल्कि बुद्धि की शक्तियों को विकसित करने के लिए होना चाहिए।

(9) ज्ञान और शक्ति दोनों का संतुलन आवश्यक है — शिक्षा केवल सूचना देने तक सीमित न रहे, बल्कि कौशल, चरित्र और कायज़्क्षमता का भी विकास करे।

(10) शिक्षक-छात्र संबंध का आधार प्रेम हो — भय या दंड नहीं, बल्कि प्रेम और सहानुभूति शिक्षा का आधार होना चाहिए।

(11) शिक्षा के उच्च उद्देश्य सर्वोपरि रहें — शिक्षण केवल साधन है; शिक्षा का उद्देश्य मानवता, नैतिकता और आत्मोन्नति का संवर्धन है।

(12) धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा का आधार मातृत्व-संबंध है — पेस्टालॉजी के अनुसार माता-पुत्र का संबंध ही सबसे श्रेष्ठ नैतिक शिक्षण का आधार है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि पेस्टालॉजी ने विद्यालय में घर-जैसा वातावरण प्रस्तुत करने का प्रयास किया। उनके शैक्षणिक चिन्तन और प्रयोगों का प्रभाव शिक्षा के सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक दोनों पक्षों पर पड़ा।

उनके समय तक शिक्षा का अथज़ बच्चों को बाहर से ज्ञान देना मात्र था, परंतु पेस्टालॉजी ने यह सिद्ध कर दिया कि शिक्षा बालक की आन्तरिक शक्तियों के विकास की प्रक्रिया है। इस विचार ने शिक्षा को मनोविज्ञान से जोड़ा और आधुनिक शिक्षण में बाल-मनोविज्ञान को केंद्र में स्थान दिया।

उन्होंने शिक्षक-प्रशिक्षण की नींव रखी — यह विचार कि अध्यापक को शिक्षित और प्रशिक्षित होना चाहिए, सबसे पहले पेस्टालॉजी ने ही प्रस्तुत किया। उनके शिष्यों में से हरबर्ट ने अनुदेशन प्रणाली का विकास किया तथा फ्रोबेल ने खेल-विधि को अपनाया, जो आज विश्वभर में प्रचलित है।

इसी कारण पेस्टालॉजी को आधुनिक प्रगतिशील शिक्षा का जनक कहा जाता है। उन्होंने शिक्षा को मानवीय, नैतिक, मनोवैज्ञानिक और सार्वभौमिक दृष्टिकोण प्रदान किया। वास्तव में उन्हें शिक्षा-जगत का मसीहा कहना उचित है।

❑❑❑